International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 11 No. 4 March-April 2024

सुशीला टाकभौरे के कहानियों में नारी सशक्तिकरण

प्रा.डॉ.संगीता विष्णु भोसले
वसुंधरा कला महाविद्यालय,जुळे सोलापुर, सोलापुर(महाराष्ट्र)
Corresponding Author: - प्रा.डॉ.संगीता विष्णु भोसले
DOI- 10.5281/zenodo.12703527

सारांश:

नारी के प्रति समाज का दृष्टिकोण घृणित और उपभोगी रहा हैं। इसका कारण है नारी के प्रति समाज की धारणा दो मुलभूत तत्वों से बनी हैं– भय और घृणा। स्त्री पर लादे गये पुरूषवादी सिध्दांत उनके भय का कारण हैं और स्त्री कमजोरी उसके घृणा का कारण है। स्त्री आजादी के पूर्व और आजादी के बाद भी अपने संपूर्ण अधिकारों से उपेक्षित हैं। सुशीला टाकभौरे के साहित्य में परंपरा का निर्वाह करनेवाली, समझौता करनेवाली, समस्या से जुझने वाली, संघर्ष में जीतने वाली नारी का चित्रण हुआ हैं । लेखिका मध्यम मार्ग अपनाती हैं। जबतक सहनशीलता हैं सहन करती हैं, मर्यादा का बांध टूटने के बाद टूट पडती हैं। अपने शक्ति का परिचय देती हैं। उन्होंने नारी की पराश्रयीता, धार्मिकवृत्ति, नौकरी पेशा नारी की समस्या, दोयम स्थिति, पारिवारिक हिंसा, आर्थिक-भावनिक शोषण, बेटा-बेटी भेद, अंधविश्वासी, एकतरफा प्रेम, आंतरजातिय विवाह, नारी का अहं आदि नारी जीवन की त्रासदी को उद्घाटित किया हैं। उनके कहानी के दलित नारी पात्र अपने मानवीय अधिकार के लिए संघर्ष करते हैं। कालबाह्य मान्यताओ को तोडकर नवीन सामाजिक मूल्यों पर जीवन निर्वाह करना पसंद करते हैं।

शब्दकुंजी: नारी सशक्तिकरण, सहनशीलता, सामाजिक मूल्य, परंपरा, स्त्री-शिक्षा, मनुवादी समाज, संघर्ष आदि।

प्रस्तावना:

आधुनिक भारत में नारी मुक्ति पर चिंतन करने वाले महात्मा ज्योतिराव फुले जी को स्त्री स्वतंत्रता का उध्दारक कहा जाता है। उन्होंने स्त्री-शिक्षा की नींव डालकर स्त्री को उसके अस्तित्व के प्रति सचेत किया हैं। पत्नी सावित्रीबाई को शिक्षा देकर प्रस्थापित मनुवादी समाज व्यवस्था की बुनियाद को हिला दिया था। सावित्रीबाई फुले ने स्त्री शिक्षा का व्रत लेकर भारतीय नारी को गुलामी की बेडियों से मुक्त करने के लिए संघर्ष किया हैं। इस संघर्ष से स्त्री में अस्तित्व की चेतना जागृत हुयी हैं। ताराबाई शिंदे और मुक्ता सालवे जैसे चरित्र स्त्री-जाति पर होने वाले अन्याय के विरूध्द आवाज उठाने का साहस जुटा पाये हैं। अत: नारी संघर्ष चेतना के बीज म. फुले जी ने बोये थे। डॉ.अम्बेडकरजी ने इस बीज को सींचकर उसका वृक्ष निर्माण किया। अर्थात गुरू म. फुले जी के कार्य को आगे बढाकर स्त्री स्वतंत्रता को संवैधानिक रूप दिया। डॉ. अम्बेडकर पत्नी रमाबाई को लिखे पत्र में कहते हैं कि प्रिय रामू मैं स्त्री-मुक्ति के लिए लडने वाला लढवय्या हूँ, सिपाही हूँ । मेरा किसी ने कितना भी विरोध किया तो भी मैं स्त्रियों को उनके अधिकार दिलाने के लिए शरीर से खून की आखिरी बूँद तक लडता रहूँगा किंतु पीछे नहीं हटूँगा। डॉ.अम्बेडकर जी स्त्री-स्वतंत्रता के लिए अपने मंत्री पद से इस्तिफा देने वाले पहले और अंतिम मंत्री साबित हुए हैं। उनकी सुझ-बुझ और मेहनत का यह फल हैं कि आज साहित्य और समाज में नारी अपने मानवाधिकार के लिए संघर्ष कर रही हैं।

साठोत्तरी युग की हिंदी महिला लेखिकाओं ने नारी जीवन के कथ्य को साहित्य में प्राथमिकता दी हैं। महादेवी वर्मा का कथन हैं,"नारी जागरण की दृष्टि से तो साहित्य उसके स्वत्व और व्यथा का समर्थ व्याख्याकार ही रहा हैं। कवियो के कंठ से भारत की जय ही नहीं गुंजती नारी की जय भी ध्वनित हुई हैं। कथाकारों की आँखो में भारत माता की परवशता पर ही आँसू नहीं आए हैं, विवश नारी के बंधनों पर भी आए हैं।"[1] आज साहित्य में सहानुभूति से ज्यादा स्वानुभूति को महत्व प्राप्त हो रहा हैं। सुशीला टाकभौरे की रचनाओं में चित्रित नारी जीवन का कथ्य अनुभूति से उपजा है।

कहानियों में नारी सशक्तिकरण:

आशारानी व्होरा का वक्तव्य उल्लेखनीय हैं,"मनुष्य जाति का अबतक का सारा इतिहास पुरूष द्वारा पुरूष का विकास रहा हैं।"[2] पुरूषों ने अपने हित में स्त्री पर निर्बंध डाल दिये हैं। 'टूटता वहम' कहानी संग्रह की 'सिलिया', 'मेरा समाज' और 'धूप से भी बडा' इन कहाँनियों में सुशीला टाकभौरे के नारी जीवन से संबंधित विचार व्यक्त हुए हैं। नारी जीवन से हार न मानकर प्रस्थापित समाज व्यवस्था से संघर्ष करते हैं। वह स्वाभिमानपूर्ण जीवन जीना चाहते हैं। वर्तमान युग में नारी को खूब पढने की शिक्षा दी जा रही हैं, लेकिन अपमान –अन्याय का विरोध करने और समता-सम्मान के लिए लडने की शिक्षा नहीं दी जाती हैं।

'मेरा समाज' कहानी में लेखिका ने वाल्मीकि समाज के स्त्री की दशा को स्पष्ट किया हैं। इस समाज में स्त्री-शिक्षा के प्रति उदासिन दृष्टिकोण दिखाई देता हैं। छोटी उम्र में ही लडकियों को गृहस्थी कार्य सिखाये जाते हैं। कम उम्र में शादी करके माता-पिता अपने सिर का बोझ हल्का कर देते हैं। ससुराल में परिवार का खर्चा उठाने के लिए बहू को सफाई काम में लगा दिया जाता हैं। बेटे की गलतियों को नजर अंदाज करके बहू के साथ ज्यादतियाँ की जाती हैं। उसे घर में खाना पकाना, खिलाना, बर्तन मांजना, कपडे धोना, बाल-बच्चों को सँभालना, बडों की सेवा करना आदि जिम्मेदारीयाँ निभानी पडती हैं। व्यसनाधिन पति की गालियाँ, मारपीट, सास-ननद के ताने सुनने पडते हैं। अत: दलित स्त्री का शोषण घर और घर के बाहर दोनो जगहों पर होता हैं। मंजु सुमन कहती हैं,"हमारे समाज में औरत उसमें भी दलित औरत की स्थिति काफी दयनीय हैं। इसे यदि यों कहा जाए कि दलित औरत हर क्षेत्र में आजादी के 65 साल बाद भी पिछडी हैं। अधिकारों की बातें तो बहुत और बार-बार की जाती हैं, लेकिन असलियत में औरत की आजादी के क्या अर्थ हैं ? औरत के वस्तु से प्राणी और व्यक्ति बनने की यात्रा संघर्षपूर्ण है। आदमी ने किस तरह औरत की स्वतंत्रता को मारकर, कुचलकर उसे पालतू बनाया हैं, क्योंकि आदमी हमेशा से नारी की स्वतंत्रता से उसकी स्वतंत्र सत्ता से डरता रहा हैं। उसे ही उसने आक्रमण का केंद्र बनाया हैं।"[3] दलित वर्ग की स्त्री अच्छे दिनों की प्रतीक्षा में सारा अत्याचार सहन करती हैं। इसीमें उसका जीवन बीत जाता हैं। लेखिका जाति समाज में स्त्री की यह हालत देखकर शादी न करने तथा पढाई करके अच्छी नौकरी करने का निर्णय लेती हैं। वह समाज की स्त्री को इस दयनीय दशा से उभारना चाहती हैं। परंपराओं को बदलकर नारी में चेतना निर्माण करना चाहती हैं। लेखिका के माता-पिता को बेटी के शादी से ज्यादा उसके शिक्षा की चिंता हैं। वे बेटी को आत्मनिर्भर बनाने की सोच रखती हैं।'मेरा समाज' कहानी की अगली कडी 'सिलिया' कहानी हैं। इस कहानी में दलित कन्या से विवाह करके सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने की मंशा रखने वाले सवर्ण नेता को बेनकाब किया हैं। सिलीया खूब पढने का निश्चय करती हैं। सिलीया ग्यारहवी कक्षा में पढ रही थी। सन 1970 में अछूत कन्या के साथ विवाह का विज्ञापन छपा था। गाँव के लोग तथा रिश्तेदार सिलीया की फोटो भिजवाने की सलाह देते हैं। जो सवर्ण अछूतो की छाया से परहेज करते हैं उस घर में अछूत लडकी को कैसे रख सकते हैं? सिलीया की माँ कहती हैं,"नहीं भैय्या, यह सब बडे लोगों के चोचले हैं। आज समाज को और सबको दिखाने के लिए हमारे बेटी से शादी कर लेंगे और कल छोड दिया तो..."[4] दलित स्त्री को मोहरा बनाकर सामाजिक आदर्श का ढोंग रचने वाले सवर्ण की नीति स्पष्ट हो जाती हैं।'धूप से भी बडा' कहानी नारी की उपेक्षा, उदासी और अकेलेपन की कहानी हैं। प्रेम के त्रिकोण में नारी की व्याकुलता का चित्रण हुआ हैं। कहानी की नायिका रोमा की प्रेम विवाह में निराशा हो जाती हैं। वह सुनिल के प्रेम को ठुकराकर बंटी से प्रेम विवाह करती हैं। शादी के बाद बंटी रोमा से तटस्थ व्यवहार करता हैं। पति के प्रेम में व्याकुल रोमा को स्त्री जीवन का संताप भोगना पडता हैं। शादी के दो साल बाद ही बंटी शराब पीकर रोमा के साथ लडाई-झगडा करता हैं। बंटी के माता-पिता और आन्टी भी रोमा की परेशानी को नजरअंदाज करते रहते हैं। रोमा उदास रहने लगती हैं। घर की चार दीवारों में उसको घुटन महसूस होती हैं। वह अकेलेपन से तंग आकर सुनिल से आंतरजातिय पुनर्विवाह करती हैं। लेखिका स्त्री के पुनर्विवाह द्वारा स्त्री के अकेलेपन और उदासी भरे जीवन में फिर से प्रेम का रंग भरने का मार्ग सुझाती हैं। प्रेम की परिभाषा देते हुए स्वामी रामतीर्थ कहते हैं,"प्रेम एक रोमांस भर नहीं हैं, एक आत्मीयता हैं। अंतरगता हैं, एक विश्वास हैं, एक शक्ति हैं। जीवन के लिए एक सार्थक प्रेरणा हैं। प्रेम बंधन नहीं हैं, मुक्ति हैं। प्रेम का अर्थ एक-दूसरे का समर्पण कर एक-दूसरे के भीतर कैद हो जाना नहीं हैं, अपना पृथक अस्तित्व खोना नहीं हैं, केवल व्यक्तिगत अहम से ऊपर उठकर आत्मा के स्वरूप को प्राप्त करना हैं।"[5] डॉ.अम्बेडकर ने संविधान द्वारा स्त्री को

आंतरधर्मीय और आंतरजातिय विवाह करने का अधिकार दिया हैं। इस अधिकार से स्त्री अपने जीवन को फिर से जी सकती हैं।

'टूटता वहम 'कहानी संग्रह में लखिका स्त्री जीवन की समस्याओ का हल अम्बेडकर जी के शिक्षा, स्त्री स्वतंत्रता और आंतरजातिय पुनर्विवाह के विचारों से करती हैं।

व्यक्ति की चेतना परिस्थिति से प्रभाव ग्रहण करती हैं। साठोत्तरी युग के विचारधारा से महिला लेखिकाओं के विचारों में परिवर्तन आया हैं।डॉ. किरणबाला अरोडा कहती हैं,"सन साठ के बाद की सामाजिक राजनीतिक, धार्मिक और संस्कृतिक परिस्थितियों में स्पष्ट बदलाव आया हैं। जिसका प्रभाव नारी जीवन तथा उसके चित्रण पर पडा हैं।"[6] सुशीला टाकभौरे प्रगतिशील विचारधारा की लेखिका हैं। उनके कहानी के नारी पात्र शारीरिक संघर्ष के साथ-साथ मानसिक और वैचारिक संघर्ष करते हैं। उनका संघर्ष परिवर्तन के लिए हैं। 'संघर्ष' कहानी संग्रह की 'छौआ माँ', 'संभव-असंभव' और 'दमदार' कहानियाँ नारी चेतना के जागृति, सबलता और मुक्ति की कहानियाँ हैं।'छौआ माँ' कहानी दलित समाज के नारी की दर्दभरी कहानी हैं। दलित समाज में बहू-बेटियों को पुश्तैनी व्यवसाय में लगा दिया जाता हैं। छौआ माँ जब आठ-दस साल की उम्र में ब्याहकर आयी थी, तब से गाँव में साफ सफाई का काम कर रही हैं। उसे गाँव के डॉक्टर से दाईपन के काम के लिए प्रमाण पत्र भी मिला हैं। दलित समाज को नियंत्रित रखने के लिए उनपर परंपरागत व्यवसाय करने के निर्बंध डाल दिए गये हैं। दलितों के लिए जाति व्यवसाय की परंपरा पीढी-दर-पीढी हस्तांतरीत होती रही हैं। परंपरा के बारेमें बोगार्डस कहते हैं,"परंपरा और रूढियाँ समूह द्वारा स्वीकृत, सामाजिक नियंत्रण की पध्दतियाँ हैं, जिन्हे सहज स्वीकारा जाता हैं और वह एक पीढी से दूसरी पीढी की ओर हस्तांतरित होती रहती हैं।"[7] छौआ माँ निरर्थक और घृणित परंपरा को तोडना चाहती हैं।वह बेटी तुलसा को सफाई और दाईपन के काम से दूर रखती हैं। छौआ माँ का क्रांतिकारी विचार समाज को सहन नहीं होता हैं। वे छौआ माँ के चरित्र पर लांछन लगाते हैं। "चरित्रवान औरत के अस्मिता पर कलंक लगाया जाए तो वह आक्रोश के सीमा को पार कर जाती हैं।"[8] छौआ माँ आक्रोश के साथ पुश्तैनी व्यवसाय को छोड देती हैं। क्रांति के लिए बलिदान दिया जाता हैं। छौआ माँ को परंपरा को तोडने के लिए अपने प्राणों का बलिदान देना पडता हैं। दलित स्त्री के इज्जत पर लांछन लगाने वाले समाज को अपने घिनौनी हरकत पर कभी शर्म नहीं आती हैं। बल्कि दलित स्त्री के इज्जत को सरेआम निलाम करनें में ही अपनी बहादूरी समझता हैं। छौआ माँ का संघर्ष स्त्री अस्मिता की रक्षा के लिए था।

'संभव असंभव' स्त्री के अतृप्त प्रेम भावना की कहानी हैं। मनुसंहिता में स्त्री पर जन्म से लेकर मृत्यू तक विभिन्न पाबंदियाँ लगाकर उसके अस्तित्व को नगण्य बना दिया हैं। भारतीय समाज में स्त्री किसी अनजान युवक के साथ घूम-फीर नहीं सकती हैं। स्त्री और पुरूष की मित्रता को समाज संदेह की दृष्टि देखता हैं। पति के अलावा किसी अन्य पुरूष की प्रेमी के रूप में कल्पना करने वाली स्त्री को समाज चरित्रहिन मानता हैं। उसे प्रताडित करता हैं। पुरूष पर किसी प्रकार की पाबंदी नहीं होती हैं। लेखिका कहती हैं,"लडकों का क्या? घुमो, फिरो, मजा करो और चल दो। उन्हें अधिक कुछ फर्क नहीं पडता हैं। लेकिन महिलाएँ बेचारी बदनाम भी होती हैं, दुष्परिणाम भी उठाती हैं और अपनी शोषित पीडित भावनाओं को जख्मों के रूप में बरसों बरस ढोती रहती हैं।"[9] छुट्टी के दिनों में मनाली पहाडों पर घूमने के लिए जाती हैं। वहाँ उसकी मूलाकात राजीव से होती हैं। दोनों की जान-पहचान आत्मीयता में बदल जाती हैं। राजीव की आँखो में मनाली के लिए चाहत है। लेकिन राजीव से उम्र में बीस साल बडी मनाली मर्यादा का पालन करते हुए फासला बनाकर रखती हैं। घर-परिवार की व्यस्तता में स्त्री अपनी भावनाओं और इच्छाओं की ओर ध्यान नहीं दे पाती हैं। वह केवल आदर्शों के लिए आदर्श के साथ जीवनयापन करती हैं। ये आदर्श उसके भावनाओं का गला घोट देते हैं। मनाली भी अप्रत्यक्ष रूप से राजीव को चाहने लगी थी। वह मन की उलझनों को समझती हैं, परंतु स्वीकार करने से कतराती हैं। वह जिम्मेदार पत्नी और माँ हैं। उसे राजीव के साथ बीता ये क्षण अनमोल लगते हैं। मनाली दोस्त से ज्यादा पति को अहमियत देती हैं। आँखो पर पट्टी बाँधकर आदर्श पत्नी का कर्तव्य निभाती हैं। अत: डॉ. मृणाल पाण्डे कहती हैं,"समाज में स्त्रित्व की मूल अवधारणा नकारात्मक हैं। लगभग सभी धार्मिक और दार्शनिक दायरे में स्त्री को पुरूष के संदर्भ में एक अपूर्ण और सापेक्ष जीवन के रूप में देखा गया हैं।"[10] अत: स्त्री की व्यक्ति के रूप में पहचान छिनकर उसे आदर्श का दामन पहनाकर भावनिक और मानसिक शोषण किया हैं।

'दमदार' कहानी स्त्री के शारीरिक शोषण की समस्या पर प्रकाश डालती हैं। स्त्री अपने शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक ताकत से पुरूष वर्चस्व को चुनौती देती हैं। परंपरावादी पुरूष समाज स्त्री को उपभोग की वस्तु समझता आया हैं। सामंत वर्ग के लिए वह मन बहलाने का खिलौना हैं। कंजर जाति की सुमन दमदार स्त्री है। उसका पति छेदिलाल एक-दो महिने बाहर रहता है और दो-तीन साल के लिए जेल के अन्दर चला जाता है। उसका यह क्रम चलता रहता है। अकेली असहाय सुमन की मजबूरी का फायदा गाँव वाले लेते हैं। पुरूष की निरंकुशता के सामने न झुकने वाली स्त्री को समाज दण्डित करता हैं। सुमन को जाति से बाहर निकाला जाता है। दिप्ती खंडेलवार पुरूष की निरंकुशता और समाज के दोहरे मानदण्ड को रेखांकित करते हुए कहती हैं कि सेक्स के जिस गुनाह से पुरूष की स्वाभाविक दुर्बलता मानकर भूला दिया जाता हैं, वही गुनाह यदि नारी कर बैठे तो वह कलंकिनी हो उठती हैं, अक्षम्य अपराधिनी...। भावना के द्वारों से लेकर घरों की, कोठों की पत्थर की चौखट तक पर नारी ही सिर पटकती रह जाती हैं...। सुमन जग्गू पहलवान को उसकी औकात दिखाती है। जग्गू पहलवान के सुमन के साथ अनैतिक संबंध है। वह सुमन पर हक दिखाने की कोशीश करता है, लेकिन सुमन किसी के अधिकार में रहना नहीं चाहती है। वह बीच बजार में, सरे आम जग्गू पहलवान को चप्पल से मारकर उसकी मर्दानगी निकालती है। औरत को कमजोर समझकर पुरूष उसे अपने अधीन रखता है। औरत की सहनशीलता का बांध टूट जाता हैं, तो वह ज्वालामुखी बनकर समाज के नीति नियमों को भस्म कर देती हैं। सुमन कहती हैं,"अभी तक आदमी ही सरेआम औरतों को नंगा करके मारते आये हैं। क्या, औरत आदमी को नंगा करके नहीं मार सकती?"[11] स्त्री, पुरूष से किसी भी रूपमें कमजोर नहीं हैं। पुरूष स्त्री के स्वतंत्र, संपूर्ण और दुर्जेय अस्तित्व से घबराकर उसे अपने अधीन रखता हैं। मंजु सुमन कहती हैं,"उल्लेखनीय हैं कि नारी अपनी अखंडता और संपूर्णता में अजय और दुर्जेय हैं। लेकिन आदमी का हर पल यह प्रयास करता हैं कि नारी को किस तरह परतंत्र और निष्क्रिय बनाया जा सके। उसने यह मान लिया हैं कि औरत एक शरीर हैं, सेक्स हैं, जहाँ से उसकी स्वतंत्रता की चेतना और स्वच्छंद व्यवहार पैदा होते हैं। इसलिए वह उसके अपनी इच्छा नुसार हर स्थिति के लिए नियंत्रित करना चाहता हैं।"[12] आज स्त्री अपने स्वतंत्र अधिकार की रक्षा के लिए पुरूष जाति से और समाज से संघर्ष करने लगी हैं।

निष्कर्ष:

सुशीला टाकभौरे की कहाँनियाँ नारी के मन, भावना और मानसिकता के परतों को खोलकर दुनिया को उसके मनुष्य होने का एहसास कराती हैं। ऊपर से शांत दिखने वाली नारी के मन में आक्रोश और प्रतिकार का कितना बडा बवंडर छिपा हैं इसकी अनुभूति हो जाती हैं। लेखिका को दलित स्त्री होने के कारण खुद से, परिवार से और समाज से संघर्ष करना पडा हैं। कहानियो के नारी पात्र परंपरावादी मूल्यों को नकारकर नये सामाजिक मूल्यों का समर्थन करते हैं। सुशीला टाकभौरे ने जीवन की अनुभूतियों पर लेखन कार्य किया हैं। उनकी अनुभूति संपूर्ण नारी जाति का प्रतिनिधित्व करती हैं। सुशीला टाकभौरे की कहाँनिया में नारी का सामाजिक जीवन, रूढियों का बहिष्कार, जातिय भावना से त्रस्त नारी, दांपत्य जीवन में तणाव, वैवाहिक जीवन में घुटन, अनमेल विवाह से उत्पन्न उपेक्षितता, कामकाजी नारी का संघर्ष, अभावग्रस्त नारी की महत्वाकांक्षा, पुरूष के अहं का शिकार आदि नारी जीवन की समस्यओं का चित्रण हुआ है। नारी सदियों से अपमानित जीवन व्यतीत करती आयी हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. तेजसिंह- दलित समाज और संस्कृति, पृष्ठ 19
2. डॉ. सुशीला टाकभौरे- अनुभूति के घेरे, पृष्ठ 31
3. डॉ. सुशीला टाकभौरे- अनुभूति के घेरे, पृष्ठ 68
4. डॉ. आर. पी. भोसले- कुसुम अंसल के हिंदी साहित्य में नारी जीवन के विविध आयाम, पृष्ठ 71
5. डॉ. सुशीला टाकभौरे- अनुभूति के घेरे, भूमिका से
6. वही, पृष्ठ 86
7. वही
8. डॉ. तारा अग्रवाल - मृदला गर्ग का कथा साहित्य, पृष्ठ 100
9. डॉ. भगीरथ बडोले निर्मल- स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में मानवमूल्य और उपलब्धियाँ, पृष्ठ 96
10. डॉ. सुशीला टाकभौरे- अनुभूति के घेरे, पृष्ठ 91
11. डॉ. सुशीला टाकभौरे- टूटता वहम, पृष्ठ 30
12. वही, पृष्ठ 61